

न्यायमूर्ति एम.एम. कुमार और रितु बाहरी के समक्ष

केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ और अन्य- याचिकाकर्ता

बनाम

केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण, चंडीगढ़ न्यायपीठ, चंडीगढ़ और अन्य, प्रतिवादी

सीडब्ल्यूपी सं. I0844/CAT सन् 2008

12 अक्टूबर, 2010

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-संविदात्मक कर्मचारी के विरुद्ध यौन उत्पीड़न के आरोप प्रारंभिक जांच-सेवाओं की समाप्ति-नियुक्ति की शर्तों पर आधारित भविष्य के रोजगार से वंचित करने का आदेश-प्रकृति में कलंक-अधिकरण का आदेश जिसमें याचिकाकर्ता को कानून के अनुसार नया आदेश पारित करने की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए समाप्ति आदेश को बरकरार रखा गया।

अभिनिर्णित, कि आक्षेपित आदेश प्रारंभिक जांच रिपोर्ट पर आधारित है जिसमें आरोप लगाया गया है कि प्रतिवादी संख्या 2 एक महिला छात्र के यौन उत्पीड़न का दोषी है और उसे भविष्य के रोजगार से वंचित करता है। एक बार जब एक संविदा कर्मचारी अनुबंध के नियमों और शर्तों के आधार पर काम कर रहा है, तो उन नियमों और शर्तों को उसकी सेवाओं को समाप्त करने के लिए लागू किया जा सकता है। याचिकाकर्ता प्रतिवादी संख्या 2 को जारी नियुक्ति के आदेश में निर्धारित मोड को अपना सकता था। हालांकि, याचिकाकर्ता ने एक आदेश पारित करने का एक गलत तरीका अपनाया जो यौन उत्पीड़न के आरोपों और प्रतिवादी संख्या 2 को भविष्य के रोजगार से वंचित करने के कारण आदेश को कलंकित बनाता है।

(पैरा 9, 11 और 12)

राजेश गर्ग, अधिवक्ता, याचिकाकर्ताओं के लिए।

बी.एस. वालिया, अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 2 के लिए।

न्यायमूर्ति, एम.एम. कुमार।

(1) चंडीगढ़ प्रशासन ने केन्द्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, चंडीगढ़ न्यायपीठ, चंडीगढ़ (संक्षिप्तता के लिए 'अधिकरण') द्वारा पारित 1 फरवरी, 2008 के फैसले को चुनौती देते हुए इस न्यायालय से संपर्क किया है, जिसमें कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 2 श्री विनोद कुमार, शारीरिक शिक्षा अनुदेशक, जो अनुबंध पर काम कर रहे थे, की सेवाओं को अवैध रूप से समाप्त कर दिया गया था और उनकी बर्खास्तगी का आदेश दिनांक 22

नवंबर को, जिला शिक्षा अधिकारी, चंडीगढ़ द्वारा पारित 2006 (पी.4) कलंकित था। अधिकरण ने आगे कहा कि प्रतिवादी संख्या 2 को इंटररेगनम अवधि के लिए बिना किसी वेतन के सेवा में वापस ले लिया जाए। तथापि, अंतराल अवधि को अन्य सभी सेवा लाभों के लिए गिना जाएगा।

(2) मामले के संक्षिप्त तथ्यों पर पहले ध्यान दिया जा सकता है। श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 को 8 जुलाई, 2002 (पृष्ठ 1) के नियुक्ति आदेश के तहत 2,000 रुपये प्रति माह के निश्चित वेतन पर अनुबंध के आधार पर सरकारी वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय, सेक्टर 16, चंडीगढ़ में शारीरिक प्रशिक्षण प्रशिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। यह नियुक्ति शिक्षा विभाग द्वारा शिक्षकों/मास्टर्स की कमी से निपटने के लिए जारी परिपत्र दिनांक 28 नवम्बर, 1997 के अनुसरण में की गई थी और इस प्रकार संस्थाओं के प्रमुखों को संविदा आधार पर शिक्षकों की नियुक्ति के लिए प्राधिकृत किया गया था। अंततः जिला शिक्षा अधिकारी (पी.4) द्वारा जारी सम तिथि के आदेश के अनुसार, 22 नवंबर, 2006 को उनकी समाप्ति की तारीख तक उनका वेतन बढ़ाकर 7,450 रुपये प्रति माह कर दिया गया।

(3) वर्ष 2003 में सुश्री अनुपिका नाम की एक लड़की ने श्री विनोद कुमार द्वारा यौन उत्पीड़न के गंभीर आरोप लगाए और परिणामस्वरूप उसे स्कूल के जूनियर विंग में स्थानांतरित कर दिया गया। कुछ समय बाद उसे फिर से स्थानांतरित कर दिया गया और सितंबर, 2006 में उसी लड़की ने श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा इसी तरह के उत्पीड़न की शिकायत की। शिकायत (पी. 1ए) में लगाए गए आरोपों के सत्यापन के लिए प्रारंभिक जांच की गई थी। प्रारंभिक जांच के आधार पर श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 को 20 नवंबर, 2006 (पी.2) को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। उन्हें दो दिनों के भीतर लिखित में अपना बचाव प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया और व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर भी दिया गया। उन्होंने कारण बताओ नोटिस का कोई जवाब दाखिल नहीं किया और न ही वह जिला शिक्षा अधिकारी के समक्ष पेश हुए। वह वास्तव में नियमों की आवश्यकता के अनुसार स्वीकृत किए बिना आकस्मिक अवकाश पर चला गया। विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 की ओर से गंभीर चूक को ध्यान में रखते हुए और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पहले भी उनके खिलाफ इसी तरह की शिकायत मिली थी, उनकी सेवा का अनुबंध समाप्त कर दिया गया था। यह भी पाया गया कि उनकी सेवा में निरंतरता छात्रों के हितों के खिलाफ होती। प्रतिवादी संख्या 2 का आरोप है कि उन्होंने एक अभ्यावेदन भेजा था। दस्तावेजों की आपूर्ति के लिए श्री विनोद कुमार द्वारा प्रस्तुत किए गए तथाकथित अभ्यावेदन की प्राप्ति को याचिकाकर्ता द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। परिणामस्वरूप उनकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं, दिनांक 22 नवम्बर, 2006 के आदेश (पृ.4) द्वारा।

(4) आदेश दिनांक 22 नवम्बर, 2006 (पृ.4) से व्यथित महसूस करते हुए श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी

क्रमांक 2 ने 0000 दायर किया। 2007 के 50 सीएच। 22 नवंबर के आदेश में अधिकरण के समक्ष दलीलों को पूरा करने के बाद। अधिकरण द्वारा रिट याचिका (सिविल) संख्या 2006 को यह कहते हुए रद्द कर दिया गया था कि यह आदेश कलंकित है और आवेदक सुनवाई/नियमित विभागीय जांच के अवसर का हकदार है। अधिकरण ने याचिकाकर्ता-प्रशासन के उस बयान को खारिज कर दिया, जिसमें उसके आचरण के साथ-साथ कारण बताओ नोटिस का कोई जवाब दाखिल नहीं करने की परिस्थितियों पर प्रकाश डाला गया था। पूर्वोक्त मुद्दे पर, अधिकरण ने निम्नानुसार आयोजित किया:

"उत्तरदाताओं द्वारा परिस्थितियों के बारे में भारी भरोसा किया जाता है कि कारण बताओ नोटिस का कोई जवाब नहीं था। बेशक, आवेदक को कारण बताओ नोटिस का जवाब प्रस्तुत करना था, लेकिन हमारा विचार है कि यदि उसने निर्धारित समय के भीतर जवाब प्रस्तुत किया होता, तो भी इसे कारण बताओ नोटिस द्वारा उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों की स्वीकारोक्ति, स्वीकार्यता और स्वीकृति के बराबर नहीं माना जा सकता था। चुप्पी को कभी-कभी सहमति के बराबर या विकल्प के रूप में माना जा सकता है, लेकिन इसे किसी आरोप की स्वीकारोक्ति के बराबर नहीं माना जा सकता है। यदि कोई स्पष्टीकरण आगामी नहीं था, तो उत्तरदाताओं को एक जांच करने के लिए बाध्य किया गया था और यह दिखाने के लिए कम से कम न्यूनतम सामग्री पर जवाब देने के लिए पर्याप्त होगा कि अपराधी कर्मचारी अपने व्यवहार में अविवेकी था। "

(5) आदेश के पैरा 11 में अधिकरण ने मामले को याचिकाकर्ता को वापस भेजने की संभावना को खारिज कर दिया, ताकि श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 को उचित जांच का मौका दिया जा सके। पैरा 11 में बताए गए उपर्युक्त पाठ्यक्रम को छोड़ने का कारण यह है कि किसी भी मामले में यौन उत्पीड़न का मामला नहीं बनता है। पूर्वोक्त मुद्दे पर अधिकरण का दृष्टिकोण इस प्रकार है:

".....आवेदक के खिलाफ आरोप सितंबर, 2006 में आयोजित पूरक परीक्षा के दौरान आचरण के बारे में था। उसने 12वीं कक्षा की एक छात्रा को घूरा था और कुटिल मुस्कान दी थी। यह सुझाव दिया जाता है कि वह इस तरह से मुरझा गई थी और उसे अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा था। हमारे अनुसार, इसे संभवतः इसके व्यापक अर्थ में भी यौन उत्पीड़न के रूप में नहीं माना जा सकता था। यह हो सकता है कि बच्चा असामान्य रूप से और हिस्टीरिया में अभिनय कर रहा था। हम अस्पष्टीकृत प्रकृति के फोबिया की संभावना से इंकार नहीं कर सकते। उसे शायद अस्पताल ले जाया गया था और यहां तक कि अवलोकन के लिए एक मनोचिकित्सक के पास भी। यह स्पष्ट है

कि उत्तरदाताओं को स्वयं यौन उत्पीड़न के तत्व के बारे में संदेह था और उन्होंने एक पुरानी घटना को टैग किया है जो 3 साल से अधिक समय पहले हुई थी, फिर से एक अनाम अभद्र व्यवहार की। कोई विवरण नहीं दिया गया है और यद्यपि आवेदक को उस समय एक जूनियर स्टेशन में स्थानांतरित कर दिया गया था, चूंकि कोई पूछताछ, आरोप पत्र या निश्चित निष्कर्ष नहीं था, स्थानांतरण को दंड के रूप में नहीं माना जा सकता है जैसा कि सामान्य बोलचाल में अभिव्यक्ति द्वारा आमतौर पर समझा जाता है।

(6) समापन पैरा में, अधिकरण ने यह विचार किया कि एक नागरिक के पास मौलिक अधिकार उसका प्रमुख अधिकार है और उसे आमतौर पर इसे आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता है। अधिकरण ने माना कि श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 को जारी किया गया समाप्ति आदेश अवैध था और उन्हें वेतन आदि के भुगतान को छोड़कर अन्य सभी लाभों के साथ 1 फरवरी, 2008 से सेवा में वापस लेने का आदेश दिया गया था।

(7) याचिकाकर्ता के विद्वक अधिवक्ता श्री राजेश गर्ग ने तर्क दिया है कि जब भी *तदर्थ* या प्रोबेशनर सेवाओं को समाप्त करने का आदेश जारी किया जाता है, तो उसके काम और आचरण के संबंध में प्रतिकूल टिप्पणी का कुछ तत्व होना तय है। विद्वक अधिवक्ता के अनुसार, यह अभिव्यक्ति कि एक परिवीक्षाधीन को पद के लिए उपयुक्त नहीं पाया गया है, जरूरी नहीं कि एक कलंकित आदेश माना जाएगा। अपने सबमिशन के समर्थन में, विद्वक अधिवक्ता ने **भारत संघ बनाम पीएस भट्ट (1), और एपी स्टेट फेडरेशन ऑफ कॉप स्पिनिंग मिल्स लिमिटेड और अन्य बनाम पीवी स्वामीनाथन (2)** के मामलों में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया है, उन्होंने तर्क दिया है कि अधिकरण के समक्ष चुनौती दिए गए आक्षेपित आदेश में याचिकाकर्ता के आचरण पर प्रतिकूल टिप्पणी करने के अलावा कोई अन्य सामग्री नहीं है। विद्वक अधिवक्ता द्वारा किया गया एक और निवेदन यह है कि अधिकरण ने एक जांच अधिकारी की भूमिका निभाकर कानून में गंभीर त्रुटि की है क्योंकि यह निष्कर्ष निकाला गया है कि यौन उत्पीड़न का मामला था। विद्वक अधिवक्ता के अनुसार, इस तरह का निष्कर्ष बिल्कुल अधिकार क्षेत्र के बिना है और अधिकरण को कानून के अनुसार एक नया आदेश पारित करने के लिए मामले को याचिकाकर्ता को वापस भेजना चाहिए था।

(8) श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वक अधिवक्ता श्री बीएस वालिया ने तर्क दिया है कि श्री विनोद कुमार का अधिकार पूरी तरह से पराजित हो गया है क्योंकि 22 नवंबर, 2006 के आदेश से यह खुलासा

(1) (1981) 2 S.C.C. 761

(2) (2001) 10 S.C.C. 83

किया गया है कि उनके खिलाफ यौन उत्पीड़न का प्रथम दृष्टया मामला बनता है क्योंकि एक लड़की सुश्री अनुपिका, डी/ओ के माता-पिता ने श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 के खिलाफ लिखित शिकायत भी दर्ज की है। विद्वक अधिवक्ता ने यह भी बताया है कि अधिकरण ने दिनांक 22 नवम्बर, 2006 के आदेश में यह निष्कर्ष निकाला है कि श्री विनोद कुमार ने एक छात्र की लज्जा भंग करके गंभीर कदाचार किया है और उसे भविष्य में किसी भी रोजगार से वंचित कर दिया गया है। विद्वक अधिवक्ता ने जोरदार तर्क दिया है कि नियमित विभागीय जांच के अभाव में ऐसी कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती थी और संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 (1) के तहत याचिकाकर्ता के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया है कि कोई भी सरकारी कर्मचारी, चाहे वह तदर्थ या अनुबंध के आधार पर काम कर रहा हो, उसे संविधान के अनुच्छेद 311 (2) द्वारा परिकल्पित विभागीय जांच के बिना दरवाजा दिखाया जा सकता है, खासकर जब आदेश की नींव आपराधिक अपराध करने के आरोप की सीमा पर कदाचार है।

(9) विद्वक अधिवक्ता को काफी विस्तार से सुनने और रिकॉर्ड का अवलोकन करने के बाद, हमारा यह सुविचारित विचार है कि 22 नवंबर, 2006 के आक्षेपित आदेश को एक से अधिक कारणों से कानून की नजर में बरकरार नहीं रखा जा सकता है। आक्षेपित आदेश प्रारंभिक जांच रिपोर्ट पर आधारित है जिसमें आरोप लगाया गया है कि प्रतिवादी संख्या 2 श्री विनोद कुमार एक छात्रा के यौन उत्पीड़न के दोषी हैं और उसे भविष्य के रोजगार से वंचित करते हैं। उपर्युक्त प्रस्ताव के लिए **शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य** (3) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है। पूर्वोक्त निर्णय में **पुरुषोत्तम लाल ढींगरा बनाम यूओआई** (4) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियों को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया था:

"62. इस न्यायालय द्वारा **पुरुषोत्तम लाल ढींगरा बनाम भारत संघ, 1958 एससीआर 828 = (एआईआर 1958 एससी 36)** में एक परिवीक्षाधीन की स्थिति पर विचार किया गया था। न्यायालय की ओर से बोलते हुए प्रधान न्यायाधीश दास ने कहा कि जहां किसी व्यक्ति को परिवीक्षा पर सरकारी सेवा में स्थायी पद पर नियुक्त किया जाता है, वहां परिवीक्षा अवधि के दौरान या उसके अंत में उसकी सेवा की समाप्ति आमतौर पर और अपने आप में एक सजा नहीं होगी क्योंकि इस प्रकार नियुक्त सरकारी कर्मचारी को निजी नियोक्ता द्वारा परिवीक्षा पर नियुक्त

(3) AIR 1973 S.C. 2192

(4) AIR 1958 S.C. 36

कर्मचारी की तुलना में इस तरह के पद को बनाए रखने का कोई अधिकार नहीं है ऐसा करने का हकदार। इस तरह की समाप्ति पद धारण करने के लिए नौकर के किसी भी अधिकार की जब्ती के रूप में काम नहीं करती है, क्योंकि उसके पास ऐसा कोई अधिकार नहीं है। जाहिर है, इस तरह की समाप्ति सजा के माध्यम से बर्खास्तगी, हटाने या रैंक में कमी नहीं हो सकती है। हालांकि, ढींगरा के मामले (सुप्रा) में दास, उच्च न्यायाधीश की दो महत्वपूर्ण टिप्पणियां हैं। एक यह है कि यदि किसी संविदा या सेवा नियमों के अंतर्गत सेवा समाप्त करने का अधिकार है तो सरकार के दिमाग में काम करने वाला उद्देश्य पूरी तरह से अप्रासंगिक है। दूसरा यह है कि यदि सेवा की समाप्ति कदाचार, लापरवाही, अकुशलता या अन्य निरर्हता के आधार पर की जाती है, तो यह एक दंड है और संविधान के अनुच्छेद 311 का उल्लंघन करता है। मकसद को अप्रासंगिक क्यों कहा जाता है, इसका तर्क यह है कि यह मन की स्थिति में निहित है जो समझ में नहीं आता है। दूसरी ओर, यदि समाप्ति कदाचार पर आधारित है तो यह उद्देश्यपूर्ण है और प्रकट होता है" (महत्व दिया गया)

(10) पूर्वोक्त पैरा के अवलोकन से पता चलता है कि सेवा के अनुबंध के मामले में भी, यदि समाप्ति एक कदाचार पर आधारित है, तो इसे एक दंड के रूप में माना जाना चाहिए क्योंकि यह आदेश में ही प्रकट होता है। उपर्युक्त निर्णय आज भी वही क्षेत्र धारण करता है जो **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कौशल किशोर शुक्ला (5)** और **पी.वी. स्वामीनाथन (सुप्रा)** के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के अवलोकन से स्पष्ट है। हालांकि, पूर्वोक्त निर्णयों में यह देखा गया है कि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी को पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं है और जब भी सक्षम प्राधिकारी संतुष्ट होता है कि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी का काम और आचरण संतोषजनक नहीं है या उसकी असमर्थता के कारण सेवा में उसकी निरंतरता सार्वजनिक हित में नहीं है, कदाचार या अक्षमता यह या तो सेवा की शर्तों या संबंधित नियमों के अनुसार सेवा समाप्त कर सकता है या यह सरकारी कर्मचारी के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई का फैसला कर सकता है। **कौशल किशोर शुक्ला के मामले (सुप्रा)** के मामले में फैसले के पैरा 7 में की गई टिप्पणियां इस प्रकार हैं:

"7. एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी को पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं है, उसकी सेवाओं को बिना कोई कारण बताए एक महीने का नोटिस देकर समाप्त किया जा सकता है, या तो ऐसी समाप्ति के लिए प्रदान करने वाली संविदा की शर्तों के तहत या अस्थायी सरकारी कर्मचारियों के नियमों और शर्तों को विनियमित करने वाले प्रासंगिक वैधानिक नियमों के तहत। चूंकि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी भी स्थायी सरकारी कर्मचारी की तरह ही अनुच्छेद 311(2) के संरक्षण

का हकदार होता है , प्राय यह प्रश्न उठता है कि क्या सेवा समाप्ति का आदेश सेवा संविदा और अस्थायी नियोजन को विनियमित करने वाले संगत नियमों के अनुसार है अथवा यह दंड के रूप में है। अब यह अच्छी तरह से तय है कि आदेश का रूप निर्णायक नहीं है और यह टायर आदेश की वास्तविक प्रकृति को निर्धारित करने के लिए न्यायालय के लिए खुला है। **पुरुषोत्तम लाल ढींगरा बनाम भारत संघ एआईआर 1958 एससी 36** में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने कहा कि केवल 'बर्खास्तगी' या 'निर्वहन' जैसी अभिव्यक्तियों का उपयोग निर्णायक नहीं है और इस तरह की अभिव्यक्तियों के उपयोग के बावजूद, न्यायालय यह पता लगाने के लिए आदेश की वास्तविक प्रकृति का निर्धारण कर सकता है कि क्या सरकारी कर्मचारी के खिलाफ की गई कार्रवाई प्रकृति में दंडात्मक है। न्यायालय ने आगे कहा कि आदेश की वास्तविक प्रकृति का निर्धारण करने में न्यायालय को दो परीक्षण लागू करने चाहिए: (1) क्या अस्थायी सरकारी कर्मचारी को पद या रैंक का अधिकार था या (2) क्या उसे बुरे परिणामों के साथ दौरा किया गया है; और यदि कोई भी परीक्षण संतुष्ट है, तो यह माना जाना चाहिए कि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी की समाप्ति का आदेश सजा के माध्यम से है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी को उस पद पर रहने का कोई अधिकार नहीं है और ऐसे सरकारी कर्मचारी की बर्खास्तगी किसी भी बुरे परिणाम के साथ उससे मिलने नहीं आती है। **पुरुषोत्तम लाल ढींगरा के मामले (सुप्रा)** में आयोजित बुरे परिणामों में सेवा के नियमों और शर्तों के अनुसार एक अस्थायी सरकारी कर्मचारी की सेवाओं की समाप्ति शामिल नहीं है। ढींगरा के मामले में संविधान पीठ द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को **उड़ीसा राज्य और अन्य बनाम राम नारायण दास एआईआर 1961 एससी 177; आरसी लेसी बनाम बिहार राज्य और अन्य, सीए सं. 590/62** का निर्णय 23 अक्टूबर, 1963 को किया गया; **चंपकलाल चिमनलाल शाह बनाम भारतीय संघ एआईआर 1964 एससी 1854; जगदीश माइनर बनाम भारतीय संघ एआईआर 1964 एससी 449; एजी बेंजामिन बनाम भारत संघ** सीए सं। 1341/66 का फैसला 13 दिसंबर, 1966 को हुआ और **शमशेर सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य (1974) 2 एससीसी 831** मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के निर्णयों द्वारा दोहराया और पुष्टि की गई है। इन निर्णयों पर तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा श्री सुखराज बहादुर बनाम पंजाब राज्य और अन्य एआईआर 1968 एससी 1089 में चर्चा की गई है।”

(11) एक बार जब एक संविदा कर्मचारी अनुबंध के नियमों और शर्तों के आधार पर काम कर रहा है, तो उन नियमों और शर्तों को उसकी सेवा समाप्त करने के लिए लागू किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, 8 फरवरी, 2002 (पी - 1) को प्रतिवादी संख्या 2 को जारी किए गए नियुक्ति के आदेश ने खंड 1, 2, 5 और 7 में विशिष्ट शर्त लगाई जो इस प्रकार है:

1. कि वह नियमित/तदर्थ कर्मचारियों के लिए स्वीकार्य लाभों का हकदार नहीं होगा।
2. कि उसके पास संस्था में उपलब्ध तदर्थ/नियमित नियुक्ति के लिए कोई दावा नहीं होगा।
5. शुरुआत में यह कॉन्ट्रैक्ट छह महीने के लिए होता है। यदि उसका काम और आचरण संतोषजनक पाया जाता है तो वह एक वर्ष के लिए अनुबंध पर जारी रह सकता है।
7. कि उसे किसी भी समय कार्यमुक्त किया जा सकता है यदि उसका कार्य और आचरण असंतोषजनक पाया जाता है।

(12) याचिकाकर्ता खंड 5 और 7 में निर्धारित तरीके को अपना सकता था। हालांकि, याचिकाकर्ता ने एक आदेश पारित करने का एक गलत तरीका अपनाया जो यौन उत्पीड़न के आरोपों और श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 को भविष्य के रोजगार से वंचित करने के आरोपों के कारण आदेश को कलंकित बनाता है। **शेर सिंह बनाम पंजाब मंडी बोर्ड (6)** के मामले में दो कर्मचारियों ने इस अदालत का दरवाजा खटखटाया है। उनमें से एक को परिवीक्षा पर सहायक अभियंता के उच्च पद पर पदोन्नति दी गई थी, लेकिन छह महीने के बाद उसे हेड ड्राफ्ट्समैन के मूल पद पर वापस कर दिया गया था। उन्हें उनके मूल पद पर वापस लाने के आदेश का आधार यह था कि वह एक अन्य प्रोबेशनर के साथ शराब के नशे में पाए गए थे, जिन्हें भी वापस कर दिया गया था। दोनों ने 1991 की सीडब्ल्यूपी संख्या 15283 और 15621 दायर की, जिसे इस न्यायालय ने अनुमति दी क्योंकि प्रत्यावर्तन का आदेश कदाचार के लिए दंड की प्रकृति में था। खंडपीठ ने इस आदेश को रद्द कर दिया। इसके बाद नए आदेश पारित किए गए, जिसमें उन्हें उनके मूल पद पर वापस कर दिया गया, इस टिप्पणी के साथ कि उच्च पद पर उनकी सेवाओं की आवश्यकता अधिक थी। **शेर सिंह (सुप्रा)** के मामले में उपरोक्त आदेश को बरकरार रखा गया था। पैरा 6 में खण्ड न्यायपीठ ने माननीय उच्चतम न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों के विभिन्न निर्णयों पर भरोसा किया है। इसलिए, 22 नवंबर, 2006 (पी-4) के बर्खास्तगी के आदेश को रद्द करने से याचिकाकर्ता को कानून के अनुसार एक नया आदेश पारित करने से रोकना जरूरी नहीं है।

(13) उपरोक्त चर्चा की अगली कड़ी के रूप में, रिट याचिका विफल हो जाती है और याचिकाकर्ता को कानून के अनुसार एक नया आदेश पारित करने की स्वतंत्रता के साथ खारिज कर दिया जाता है। हम मानते हैं कि आदेश को रद्द करने के आधार पर, श्री विनोद कुमार, प्रतिवादी संख्या 2 किसी भी बकाया मजदूरी के हकदार नहीं होंगे, हालांकि वह आज से याचिकाकर्ता द्वारा किसी अन्य आदेश के पारित होने की तारीख तक मजदूरी के हकदार होंगे।

(14) याचिका का निपटारा उपर्युक्त शर्तों में किया गया है।

आर. एन. आर.

अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होगा।

रुहेला
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
करनाल, हरियाणा